जप-साधना और मनोविज्ञान

□ डॉ. ए. डी. बत्तरा, एम.ए., पी-एच.डी.

भारतीय सांस्कृतिक सभ्यता विभिन्न दृष्टिकोणों से धर्म के द्वारा प्रभावित है। भारतीय वातावरण में धर्म की व्याख्या करना कठिन है। उसी प्रकार धर्म के विभिन्न अंगों सम्बन्धी वैज्ञानिक परिभाषा देना तो कठिन ही नहीं अपितु असम्भव भी है। धर्म और संस्कृति के साथ-साथ भारतीय जीवन में अनेक साधना-पद्धतियों का विकास हुआ है। इन साधना-पद्धतियों में ऐतिहासिक काल-क्रम के अनुसार भेद और विविधता एक आवश्यक अंग-सा बन गयी है। उसी प्रकार भारत के मुख्य धर्म और प्रत्येक धर्म के साथ-साथ छोटे-छोटे सम्प्रदाय अपनी-अपनी विशेषताएँ लिये अपने-अपने अनुयायियों के साथ समाज में स्पष्ट रूप से दीखते हैं। आज के वैज्ञानिक युग में जीवन के प्रत्येक आयाम को विज्ञान और प्रयोगशाला की भाषा में देखने का प्रयत्न आधुनिक मानव की एक विशेषता है। भारत की ये बहुत-सी साधना-पद्धतियाँ विश्व की वैज्ञानिक परिभाषा में कहाँ तक खरी उतरेंगी यह एक जिज्ञासा का विषय है। परन्तु अनादिकाल से विभिन्न स्वरूप में प्रस्थापित पद्धतियों और परम्पराओं को साहित्यिक, धार्मिक, सामाजिक और प्रायोगिक स्वरूप में मान्यताएँ प्राप्त हैं। विश्व की, धर्म की दृष्टि से बढ़ती हुई जिज्ञासा, प्रायोगिक पद्धति की ओर प्रवृत्ति एवं चिकित्सात्मक दृष्टि से मनुष्य की जिज्ञासा व भावनाओं को प्रभावित करने वाले धार्मिक दृष्टिकोण की इस समय आवश्यकता है। धर्म के प्रति रुचि का स्वरूप यद्यपि बदल गया है, तथापि विश्व में अधार्मिक व्यक्तियों की संख्या बढ़ गयी है, ऐसा हम नहीं कह सकते। परम्परागत सिद्धान्त जीवन के बदलते आयामों के साथ बदलते मूल्यों के प्रभाव को ध्यान में रखकर यदि न किये गये तो आधुनिक मानव की धर्म की ओर उदासीनता और अरुचि बढ़ने की सम्भावना है। इसका उत्तरदायित्व धर्म के प्रति आस्था रखने वाले लोगों पर निश्चित रूप में है। धर्म का समग्र स्वरूप में और धर्म की विविध अवस्थाएँ तथा अंगों का मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक स्पष्टीकरण अति आवश्यक है। दार्शनिक तत्त्व-चिन्तन से बुद्धिजीवी आधुनिक मानव का समाधान कठिन है।

प्रस्तुत निबन्ध में धर्म ने जप सम्बन्धी जो विचार प्रस्थापित किये हैं उनका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने का प्रयत्न किया गया है। प्रायः विश्व के सभी धर्मों में "जप" का किसी न किसी रूप में उल्लेख और उपयोग होता है। जप के लिए मन्त्र-माला जिस प्रकार हिन्दुओं ने प्रस्थापित किये उसी प्रकार मुसलमानों ने 'तसबीह', ईसाइयों ने 'रोसरी' और तिब्बत के लोगों ने 'चक्र' का उपयोग किया। सभी धर्मों में महत्त्वपूर्ण विषय किसी एक विशेष मन्त्र का निश्चित और नियमित रूप में उच्चारण करना है। भारत में विकसित और प्रस्थापित पद्धति का ही हम यहाँ पर विवेचन करेंगे। इस निबन्ध में जप सम्बन्धी विविध ग्रन्थों में उपलब्ध ज्ञान की पुनरावृत्ति करने का हेतु नहीं है। परन्तु उस प्रणाली का मनुष्य के जीवन पर पड़ने वाले मनोवैज्ञानिक प्रभाव का विवेचन करना हमारा मुख्य लक्ष्य है। धार्मिक साहित्य में विशद विवरण उपलब्ध है। उसका अति संक्षिप्त उल्लेख करने का हेतु मात्र इतना ही है कि धर्म द्वारा प्रस्थापित मान्यताएँ हमें स्वीकृत हैं।

भारतीय धर्मों में धर्म की दार्शनिक और प्रायोगिक दो विधाएँ हैं। जप धर्म की एक प्रायोगिक विधा है और बहुत ही गहनरूप से इसका विश्लेषण किया गया है। जप के स्थूल, सूक्ष्म और सूक्ष्मतम भेद किये गये हैं जो भारतीय प्रायोगिक मन का एक संकेत है। उसी प्रकार शास्त्रों में स्थान, समय, वस्त्र, दिशा, बैठने का स्थान, मानसिक अवस्था, मन्त्र सम्बन्धी निश्चित भावना आदि का भी बड़े सूक्ष्म ढंग से विवेचन किया गया है। श्रद्धा, धैर्य, भक्ति, विनय आदि का भी उल्लेख इस संदर्भ में उपलब्ध है। विभिन्न धर्मों में जप-मन्त्रों और विधि का भी बड़ा स्पष्ट उल्लेख है। इसी के साथ-साथ जप-माला का भी निर्देश किया गया है। विशेष रूप से तुलसी की माला का उपयोग और कुछ विशेष अवस्थाओं में रुद्राक्ष की माला का भी निर्देश है। चन्दन, सीप, मोती मूँगा, अकलवेल, वैजयन्ती आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की मालाओं का भी अपनी आवश्यकतानुसार साधक उपयोग करते हैं। आजकल काँच और प्लास्टिक की मणियों का भी उपयोग होने लगा है। कुछ लोगों ने अँगुली के पर्वों से जप करने की पद्धति भी प्रस्थापित की है। अँगुली के पर्वों से जप करना आवर्त जप कहलाता है। उसमें पाँच प्रकार के आवर्तों का उल्लेख है :

(१) आवर्त
(२) शंखावर्त
(३) नन्दावर्त
(४) ओं आवर्त
(५) ह्रीं आवर्त

जप पद्धति में आधुनिक मनोविज्ञान की दृष्टि से तीन महत्त्वपूर्ण अंग दृष्टिगोचर होते हैं। पहली महत्त्वपूर्ण बात, जप करने वाले की भावना, दूसरी उसका हेतु और तीसरी महत्त्वपूर्ण बात, अपने हेतु के साध्य करने के लिए प्रयत्न करने की शारीरिक व मानसिक अवस्थाओं का नियन्त्रण। मनोविज्ञान के प्रस्थापित नियमों के अनुसार संवेग की स्थिति में मनुष्य अपने शरीर पर वांछित नियन्त्रण नहीं रख सकता। शैक्षणिक प्रक्रिया में शरीर का शान्त और शुद्ध होना आवश्यक माना गया है। विद्या-अध्ययन करने वाला विद्यार्थी शान्त और स्वच्छ जगह की खोज करेगा। भोजन करते समय हम हाथ आदि धोकर स्वच्छ पात्रों में प्रसन्नमन से भोजन करने का प्रयत्न करते हैं। आधुनिक युग में बड़े-बड़े होटलों में भोजन के समय शान्त और मधुर संगीत, बहुत ही धीमा प्रकाश और ऋतु अनुकूल वातावरण के अनुसार तापमान पर नियन्त्रण कर लोग डेढ़-दो घण्टे तक धीरे-धीरे भोजन का आस्वादन करते हैं। यदि हम अध्ययन, भोजन आदि के लिए शान्त और निर्मल वातावरण की अपेक्षा करते हैं तो जप, ध्यान आदि के लिए भी इसी प्रकार के वातावरण की अपेक्षा करना अवांछित न होगा।

जप में दूसरी एक महत्त्वपूर्ण अवस्था शरीर की है। प्रायः सभी शास्त्रकारों ने 'आसन' शब्द का उपयोग किया है। लौकिक भाषा में लोगों ने बैठने की अवस्था के साथ-साथ जिस दरी या कम्बल के टुकड़े पर हम बैठते हैं उसे भी आसन के नाम से सम्बोधित करना आरम्भ कर दिया है। इसमें सन्देह नहीं कि बैठने के लिए उपयोग में आने वाला कम्बल, चादर या वस्त्र स्वच्छ होना चाहिये, परन्तु महत्त्वपूर्ण बात शरीर की अवस्था है। साधारणतया साधना की प्रारम्भिक अवस्था में बैठकर ही जप करना मनोविज्ञान के नियम के अनुसार उचित माना जायेगा। सम्भवतः स्थूल जप का अर्थ भी यही है और स्थूल जप करते समय यदि साधक का ध्यान अपने शरीर के आसन की ओर गया (जंघों का शून्य होना, कमर पर तनाव पड़ना, ग्रीवा भाग में खिंचाव होना, पेट में विकार होने के कारण वायु को और डकारें वगैरह आना) तो इच्छा न रहते हुए भी मन्त्र की ओर से ध्यान अवश्य हटेगा। अतएव मन्त्र-जाप के संकल्प के समय शरीर की बाह्य और आन्तरिक दोनों अवस्थाओं पर नियन्त्रण अभिप्रेत है और शरीर पर नियन्त्रण थोड़े से अभ्यास के साथ स्वाभाविक रूप से आना चाहिए। एक बार जाप आरम्भ हुआ कि शरीर की ओर से, वातावरण की ओर से ध्यान हटना बहुत जरूरी है। सम्भवतः इसीलिए सभी परम्पराओं में किसी न किसी रूप में आसनों को स्वीकार किया है, परन्तु किसी एक विशेष आसन का उल्लेख आवश्यक नहीं समझा गया है। आहार-शुद्धि इत्यादि का भी अप्रत्यक्ष स्वरूप से उल्लेख अभिप्रेत है।

शान्त बैठने के अभ्यास के साथ-साथ स्वाभाविक रूप में मन्त्र की ओर ध्यान जाना आवश्यक है। भारत जैसे विचित्र देश में इस परम्परा में विविध प्रकार के मन्त्रों का संकलन उपलब्ध है (बीज अक्षरों से लेकर स्तोत्रों तक)। साथ ही इन मन्त्रों के जाप से होने वाले शुभ-अशुभ परिणामों का भी स्पष्ट विवरण उपलब्ध है। तर्क की दृष्टि से कुछ बातें समझ पाना बड़ा कठिन है। सम्भवतः मनुष्य की किसी असहाय अवस्था में कुछ धर्म-गुरुओं में इच्छा-पूर्ति मन्त्र तैयार कर दिये होंगे। परन्तु धर्म के सही स्वरूप को देखते हुए हमें ऐसा आभास होता है कि यदि सूक्ष्मतम अवस्था जप की श्रेष्ठ अवस्था है तो सभी जप अपने मन की शान्ति के लिए ही स्वीकृत होंगे। सहज, उपांशु, स्वाभाविक और साक्षीभाव प्रायः पर्यायवाची अवस्थाओं के नाम हैं जो साधक की प्रगति की ओर इंगित करते हैं और यह प्रगति मनुष्य की एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है जिसके अनुसार मूलतः मानव आत्म-केन्द्रित होता है। जप इसी भावना को विकसित करने में सहायता करता है। अतः शास्त्रीय आधार को ध्यान में रखकर हम यह कह सकते हैं कि जप मनुष्य की एक ऐसी अवस्था लाने में सहायक हो सकता है जो उसके लिए और उसके सामाजिक जीवन के लिए बहुत ही उपयुक्त सिद्ध हो सकती है। जप के द्वारा किस प्रकार मनुष्य का जीवन स्वयं के लिए और समाज के लिए उपयोगी है। इसका हम संक्षिप्त में विश्लेषण करने का प्रयत्न करेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूल रूप से दीखने वाली क्रिया जिसमें एक ही शब्द, अक्षर, या मन्त्र का पुनरुच्चार किया जाता है, जप कहलाता है। साधारणतया जब एक ही शब्द अथवा भावना का सतत और नियन्त्रित रूप में उपयोग किया जायेगा तो उसका स्वयं के शरीर में एक प्रकार का प्रवाहात्मक संचरण आरम्भ होगा। मनोविश्लेषण प्रणाली में जब रोगी की उसके रोग के विषय में शान्त स्वरूप में अधिक से अधिक विचार केन्द्रित करने को प्रेरित किया जाता है और एक ही भावना या कल्पना या विचार के सम्बन्ध में चिन्तन करने को कहा जाता है तो कुछ अर्थों में वहाँ जप की प्रक्रिया को ही अप्रत्यक्ष रूप से उपयोग में लाया जाता है। जप प्रक्रिया में साधक मन्त्र द्वारा सतत पुनरुच्चार करने के कारण मन्त्र की भावना के साथ एकात्मरूप होने का प्रयत्न करता है और एक ऐसी अवस्था लाने का प्रयत्न करता है जिसमें मन्त्र के सम्बन्ध में सभी भावनाएँ साकाररूप में उसके सामने खड़ी हो जाती हैं। साक्षीभाव का भी यह एक स्वरूप है। कतिपय उपनिषदों में प्राणायाममय जप अथवा ध्यानमय जप का उल्लेख है। आधुनिक युग में कुछ लोगों ने लिखकर जप करने के प्रयोग भी किये हैं जिसे लेखनात्मक जप के नाम से सम्बोधित किया जाता है। हेतु इतना ही है कि एक ही विचार के साथ अधिकाधिक रूप में सम्पर्क जागरूक अवस्था में बना रहे। माला फेरने का हेतु और जोर-जोर से बोलने का हेतु भी यही है कि एक ही विचार का यथासम्भव, यथाशक्ति प्रवाह बना रहे। इस प्रवाह में इच्छाशक्ति और भावना का बड़ा महत्त्व है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि जप द्वारा अभिप्रेत प्रवाहित अवस्था में सातत्य रखा जा सकता है और मन्त्र उसके लिए एक उपयुक्त साधन है। उसी प्रकार जप के सम्बन्ध में अपनी भावना और विचार स्पष्ट होना बहुत आवश्यक है।

एक महत्त्वपूर्ण बात है जो जप के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण की अपेक्षा करती है वह है साधना-पद्धति में माला, जप, मन्त्र आदि का महत्त्व। ये सभी साधन के स्वरूप में स्वीकार किये गये हैं। साधन अनेक प्रकार के हो सकते हैं, अतः साधनों के सम्बन्ध में विवाद व्यर्थ है। आवश्यकता और सामर्थ्य के अनुसार लाभ लेने की वृत्ति साधक पर निर्भर करेगी। आधुनिक युग में कुछ लोगों ने जो आलोचना की है उस ओर संकेत करने से पहले हम कबीर के प्रसिद्ध वचन की ओर ध्यान देंगे।

'माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर।
कर का मनका छांड़ि दे, मन का मनका फेर॥

एक बात तो स्पष्ट है कि प्राचीन युग से आज तक इस क्रिया का विरोध नहीं किया गया है वरन् क्रिया के विकृत रूप का विरोध ही किया गया है। इसलिए जैसा कि हमने ऊपर संकेत दिया है, मन्त्र, माला, आसन, स्थान आदि का महत्त्व जप की दृष्टि से गौण है। महत्त्वपूर्ण बात जप की भावना है और भावना को सदा सामने रखने के लिए जप एक अत्यन्त महत्वपूर्ण साधन है। साधक अपने लक्ष्य की ओर जागरूक अवस्था में जप द्वारा ही आगे बढ़ सकता है। उसका स्वरूप देश, काल, धर्म, अवस्था और आवश्यकतानुसार स्वीकार किया जा सकता है।

मनोविज्ञान की प्रयोगशालाओं में जप और ध्यान का शरीर और बुद्धि पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है, इस सम्बन्ध में कुछ प्रयोग हो रहे हैं। उसी प्रकार जप का श्वास-प्रश्वास, रक्त-प्रवाह और पाचन-क्रिया पर प्रभाव भी अभ्यास के विषय हैं। जप में शरीर जिस शिथिल अवस्था को प्राप्त होता है उस अवस्था को संवेगात्मक रोगों से बचने के लिए प्रस्थापित करना बहुत आवश्यक है। आज के प्रतियोगिता और तनावपूर्ण वातावरण में जप सम्बन्धी प्रायोगिक खोज की नितान्त आवश्यकता है। यद्यपि इस निबन्ध का विषय रोग-निवारण नहीं है, तथापि उसका वर्णन किये बिना भी इस चर्चा को नहीं छोड़ा जा सकता। अतएव प्राचीन आचार्यों की जप सम्बन्धी धारणाओं को आधुनिक विज्ञान और प्रयोग की भाषा में स्वीकार करने में सैद्धान्तिक दृष्टि से कोई कठिनाई नहीं है। धर्म की इस विधा का जन-जन के लिए उपयोग हो सकता है।

★★★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org